वीर संवत २४९२, फाल्गुन शुक्ल १०, बुधवार
दि. ०२-३-१९६६, ढाल-५, श्लोक-३,४,५. प्रवचन नं. ४०

अनित्य भावना। धर्मी क्या विचारते हैं, वह कहते हैं। धर्म अर्थात् आत्मा.. अपने आत्मा में आनन्द है, ऐसा निर्णय करनेवाला धर्मी, अपने शुद्धस्वरूप सन्मुख दृष्टि रखकर परपदार्थ की अनित्यता का चिंतवन करते हैं। वह बात चलती है। श्रावक हो या मुनि हो, अपने आत्मा में आनन्द (है), नित्यानन्द स्वरूप मैं हूँ। नित्य-स्थायी टिकनेवाली चीज तो मैं हूँ। आनन्द और शान्ति से भरा आत्मा मैं हूँ। सर्वज्ञ परमेश्वर तीर्थंकरदेव ने आत्मा का ऐसा वर्णन किया है, ऐसा कहा है। मैं आनन्द शुद्ध हूँ। पुण्य-पाप का भाव होता है वह भी क्षणिक है। सारी बाहर की चीज तो क्षणिक, अनित्य है ही। वह बात कहते हैं।

जोबन गृह गो धन नारी, हय गय जन आज्ञाकारी;
इन्द्रिय-भोग छिन थाई, सुरधनु चपला चपलाई।।३।।

देखो !'**यौवन**...' शब्दार्थ है न ? यौवन। यह यौवन क्षणिक चपल है। देह तो नाशवान है। जैसे इन्द्रधनुष और बिजली, उसकी चंचलता चमक.. चमक.. क्षण में नाश होती है। ऐसे शरीर की यौवन अवस्था (क्षणिक है)। यह तो मिट्टी-धूल है। भगवान आत्मा तो अन्दर चिदानन्दस्वरूप है। ऐसा धर्मी जीव ने अपने आत्मा में शुद्ध में, आनन्द में दृष्टि रखकर, यह यौवन अनित्य है ऐसी विचारणा वारंवार करनी। समझ में आया ?

मुमुक्षु :- यौवन बीत गया हो, उसे क्या करना ?

उत्तर :- वृद्धावस्था भी ऐसी है। यौवन बीत गया हो तो क्या हुआ ? वृद्धावस्था कैसी है ? धूल है, क्षण में पलट जायेगी। बिजली की चमक अथवा इन्द्रधनुष, वह है न ? क्या कहते हैं ? मेघधनुष। क्या कहते हैं ? काचबी.. काचबी.. काचबी.. होती है न ? क्षण में नाश होता

है। वैसे यह शरीर(में) वृद्धावस्था हो या युवान हो, मिट्टी है, यह तो धूल है। जड़ परमाणु पुद्गल की दशा है, यह आत्मा नहीं है। भगवान आत्मा तो अन्दर अरूपी सच्चिदानन्द सिद्ध समान (है)। जैसे सिद्ध भगवान है, अशरीरी हुए, ये (भी) आत्मा थे। ऐसा आत्मा अन्दर अशरीरी चैतन्यमूर्ति है, ज्ञान, आनन्दकन्द है। ऐसी दृष्टि करके यौवन हो या वृद्धावस्था हो.. भाई ! यौवन गया और वृद्धावस्था रही, उसे क्या करना ? ऐसा पूछा है।

वृद्धावस्था तो क्षण में गिर जाती है। उसके लिये तो कहते हैं न, 'खर्युं पान'। पीले पत्ते को खिरने में देर नहीं लगती। ऐसे वृद्धावस्था तो क्षण में नाश हो जायेगी। बैठे हो और फू... हो जायेगा। क्या हुआ ? अभी तो हार्ट फेईल बहुत होते हैं। मजबूत शरीर हो (और हार्ट फेईल हो जाता है)। क्योंकि संयोगी चीज है। ये कोई आत्मा की चीज नहीं। आत्मा तो अविनाशी भिन्न है। यह तो नाशवान पदार्थ का संयोग है।

'अमृतचंद्राचार्यदेव' तो वहाँ अनित्य कहते हैं, माता के उदर में बालक आया तो माता की नजर पड़े उसके पहले तो अनित्यता ने उसे गोद में ले लिया। क्या कहा ? माता को प्रसव होकर बालक आया। अभी नजर करे उसके पहले, गोद में लेने से पहले अनित्यता ने गोद में ले लिया है। कब क्षण में नाश हो जायेगा। नाशवान पदार्थ है। जन्म होते ही देह का नाश हो जाता है। ऐसी अनित्य चिंतवना करके अपना आत्मा शुद्ध स्वरूप है, उसकी अन्तर दृष्टि (करके) एकाग्रता करना, वही मनुष्यपना का कर्तव्य है। कहो, समझ में आया ?

'**यौवन, मकान,...**' पाँच-पाँच लाख, दस-दस लाख का मकान हो। बिजली गिरे और क्षण में समाप्त हो जाये।

मुमुक्षु :- जो भाडे पर रहता हो, उसे क्या करना ?

उत्तर :- वह मकान कहाँ उसके बाप का था, भाई ! उनके पुत्र के बहुत मकान हैं। करोड़ों रुपये हैं। धूल में भी नहीं है। रुपया रुपया में है, मकान मकान में है, आत्मा उसमें कहाँ से आया ? मकान में, पैसे में आत्मा कहाँ रहा ? वह तो जड़ है। क्षण में ए..ए.. ए.. हो जायेगा। क्या हुआ ? ब्लड प्रेशर। क्या कहते हैं ? ब्लडप्रेशर हो गया। ये पैसे तुम्हारे पास है न ? धूल.. होली। पैसा क्या करे ? पैसे पड़े रहे। वह नाशवान है, भाई !

भगवान परमेश्वर त्रिलोकनाथ कहते हैं कि, प्रभु ! तेरा आत्मा तो अन्दर ध्रुव है न ! ध्रुव ध्रुव अनादि है। आत्मा का नाश कभी होता है ? आत्मा कभी उत्पन्न होता है ? कोई से उत्पन्न हुआ है ? है.. है.. और है। अनादि का आत्मा अन्दर ज्ञानानन्द अरूपी सच्चिदानन्दस्वरूप है। ऐसे आत्मा की दृष्टि करके, ऐसा मकान भी नाशवान है (ऐसा चिंतवन करना)।

'**गाय, भैंस...**' लो ! नाशवान है। हमारी चीज नयी आयी और समाप्त हो जाये, मर जाये, सर्प काट ले। नाशवान चीज है। '**लक्ष्मी,...**' लो ! आप की लक्ष्मी आयी। धूल।

मुमुक्षु :- लक्ष्मी है, धूल कहाँ है ?

उत्तर :- धूल नहीं तो क्या है लक्ष्मी ? पुद्गल है। पुद्गल मिट्टी है। भगवान उसे पुद्गलास्तिकाय कहते हैं। आत्मा अन्दर जीवास्तिकाय भगवान है। यह पुद्गल है, पैसा मिट्टी-धूल है। नाशवान है, क्षण में चला जायेगा। भिखारी बन जाता है। देखो ! क्षण में भिखारी, क्षण में राजा, क्षण में रंक, कर्मे वाल्यो आडो अंक। ऐसा आता है न ? पूर्वकर्म का उदय आये तो क्षण में पैसा आये। धूल में कहाँ पैसे उसके थे ? मुफ्त में अभिमानी अनादि से (भटकता है)। ऐसा मनुष्यपना मिला उसमें पाँच-पच्चीस-पचास साल का आयुष्य। अनन्तकाल में निगोदमें से निकला। निगोद समझे ? आलू, लील, फूग (काई)। पानी में कोई होती है ना ? आलू। हमारे यहाँ बटाटा कहते हैं। एक कण में अनन्त जीव हैं। आलू के एक कण में अनन्त जीव हैं। उसमें मुश्किल से मनुष्य हुआ। यहाँ आया तो भूल गया। अपना (हित) करने का अवसर नहीं।

'**लक्ष्मी,..**' नाशवान (है)। कैसी (है) ? इन्द्रधनुष और बिजली की भाँति। '**नारी,...**' नाशवान है। देखो ! अन्दर दृष्टान्त दिये हैं, चित्र दिये हैं। देखो, स्त्री। वह तो परवस्तु है। वह आत्मा और शरीर पर है। क्षण में ए..ए..ए.. हो जाये। चली गई। अर्धांगना कहता था। वह कहाँ तेरी है ? शरीर तेरा नहीं तो स्त्री कहाँ से तेरी आई ? समझ में आया ?

भगवान आत्मा... अपने ध्रुव निज स्वरूप की दृष्टि रखकर, ऐसी पर चीज की अनित्यता की वारंवार भावना करनी चाहिए, तो आत्मा में राग को कम किया और वतीरागता की वृद्धि होती है। '**घोड़ा, हाथी, कुटुम्ब (आज्ञाकारी) नौकर-चाकर...**' ऐसे हुकम बराबर करे। सेठ साहब.. सेठ साहब ! क्षण में नाश हो जाये। '**नौकर-चाकर तथा पाँच इन्द्रियों के भोग...**'

शब्द, रूप, रस, गन्ध। घर में भंडार भरा हो। फू... होकर राख हो जाये। समझ में आया ? देखो न, जल जाता है। गोदाम जल जाता है। गोदाम जल जाये। करोड़ो रूपये के मकान जल जाये, गिर जाये, नाश हो जाये। क्षण-क्षण में वह तो नाशवान पदार्थ है। उसकी क्या चिन्ता ? अपने आत्मा की चिन्ता करे, ऐसा कहते हैं। समझ में आया ?

'(आज्ञाकारी) नौकर-चाकर तथा पाँच इन्द्रियों के भोग-यह सब इन्द्रधनुष तथा बिजली की चंचलता-क्षणिकता की भाँति क्षणमात्र रहनेवाले हैं।' लो !'श्रीमद्'ने अनित्य भावना में कहा है न ?

विद्युत लक्ष्मी प्रभुता पतंग, आयुष्य ते तो जलना तरंग;
पुरंदरी चाप अनंग रंग, शुं राचीए त्यां क्षणनो प्रसंग।

'श्रीमद् राजचंद्र'सोलह वर्ष में कहते हैं। सोलह वर्ष अर्थात् शरीर बालक था न ? शरीर बालक है, आत्मा कहाँ बालक है ? आत्मा तो अनादि अनन्त है। यह तो धूल है। शरीर बालक, वृद्ध उसकी अवस्था है। उन्होंने पहली अनित्य भावना में लिया। पहले 'मोक्षमाला' बनाई थी। **'विद्युत, लक्ष्मी...'** लक्ष्मी बिजली की चमक जैसी है। यहाँ लिया है न ?'श्रीमद् राजचंद्र'ने सोलह साल में कहा था।**'विद्युत लक्ष्मी प्रभुता पतंग,...'** बडप्पन... बडप्पन। सेठाई, ईश्वरता, बडप्पन, अधिकारी, अमलदार पाँच-पाँच हजार का वेतन।**'प्रभुता पतंग...'** पतंग के रंग जैसी प्रभुता है। भगवान आत्मा प्रभु आत्मा अन्दर है। चिदानन्दस्वरूप भगवान (है)। कवली ने, तीर्थंकर प्रभु ने आत्मा को प्रभु कहा है। अपना निज स्वरूप की दृष्टि बिना ये सब चीज अनित्य है, ऐसी भावना धर्मात्मा बारंबार भाते हैं। समझ में आया ?**'प्रभुता पतंग,..'** प्रभुता (अर्थात्) बडप्पन.. बडप्पन। सेठाई मिली हो, पाँच-पच्चीस करोड़ (हो), बड़ा सेठ हो। फू.. हो जाये। जाओ नीचे.. भीख माँगे।

'जयपुर'की बात कही थी न ? जौहरी था।'वांकानेर'में एक बड़ा जौहरी था।'जयपुर' की बजार में जौहरी की बड़ी दुकान थी। हम (संवत) २०१३ की साल में गये थे। हम दीवान कें बंगले में ठहरे थे। खाली मकान था, खाली (वहाँ) ठहरे थे। नीचे उतरे। वहाँ एक (भीख) मांगता था। ८५ साल का बुढा भीख मांग रहा था। मेरी नजर उसपर गई।'जयपुर'की बात है।

ललाट देखा। ये कोई मूल गरीब भिखारी आदमी नहीं है। ऐसा देखा। मूल में भिखारी नहीं है। किसी को पूछा कि, यह कौन है ? यह तो जौहरी की दुकान है, उसका पुत्र है। 'वांकानेर' के ब्राह्मण थे। उसका ८५ साल का पुत्र था। भिखारी के जैसे मांग रहा था। ए.. भाई ! एक पैसा दो। सब समाप्त हो गया। लक्ष्मी गई, दुकान गई, वस्तार (कुटुम्ब) गया, भिकारी भाँति। जूत्ता पुराना पहने थे। मेरी नजर गई। मुझे लगा, ये कोई मूल भिखारी नहीं है। मूल में कोई गृहस्थ है। ड्राईवर जो था (उसने कहा), जौहरी का पुत्र है, सेठने उसको पहचाना। अरे... ! मैंने पहले तो उसे बहुत पैसे दिये हैं। अभी ऐसी हालत हो गई ? ऐसी हालत क्या भिखारी होकर नरक में जाये। भगवान आत्मा शुद्ध चिदानन्द प्रभु की दृष्टि, श्रद्धा ध्रुव की करे नहीं और ऐसी अनित्यता में रुक जाये तो वह तो नाशवान चीज है। समझ में आया ?

'**पुरंदरी चाप अनंग रंग...**' यह 'श्रीमद्' कहते हैं, हाँ ! कामभोग कैसा है ? पुरंदरी-इन्द्रधनुष। काचबी के जैसे नाश हो जाये ऐसे कामभोग। युवान अवस्था में पच्चीस साल की.. अवस्था, बैल जैसा शरीर क्षण में (फू... हो जाये)। भोग स्त्री का, विषय का, कीर्ति का (भोग) क्षण में नाशवान है, भाई ! वह अनित्य है। भगवान आत्मा शुद्ध नित्य ध्रुव अपना स्वरूप रखनेवाला है। उसका तुम अनुभव करो, उसकी दृष्टि करो। ये सब तो नाशवान है। समझ में आया ?'**पुरंदरी चाप अनंग रंग**'।

'शुं राचीए त्यां क्षणनो प्रसंग..' अरे.. ! जहाँ क्षण का प्रसंग है, वहाँ क्या राचना ? भगवान आत्मा ध्रुव स्वरूप है, उसमें रुचि, दृष्टि करना या इस क्षण का प्रसंग (है उसमें करना) ? फू.. होकर चला जाये। ऐसा धर्मीजीव अपने आत्मा के शुद्ध स्वरूप के सन्मुख दृष्टि रखकर ऐसी भावना वारंबार करते हैं। कहो, समझ में आया ? आहा..हा... !

'**किन्तु निज शुद्धात्मा ही नित्य और स्थायी है।**' लो ! उसके अर्थ में है। एक आत्मा निज शुद्ध भगवान, नित्य रहनेवाला। अनादि.. अनादि.. अनादि.. अनादि... अनन्त काल रहेगा। अनादि का है। आत्मा नित्य वस्तु है। नित्य की श्रद्धा, आत्मा नित्य स्थायी है, '**ऐसा स्वोन्मुखपूर्वक चिंतवन करके, सम्यग्दृष्टि जीव वीतरागता की वृद्धि करता है...**' समझ में आाया ? समय मिले नहीं, क्या करना ? कहो, भाई ! ये समय मिला तो होली (करने लगा)।

राग और द्वेष, विकार, कमाना, खाना, दुकान की, धूल की। ये तो मिट्टी-धूल है। सुन न ! समझ में आया ? भाई ! हाँ कहते हैं। (इनके) पास पैसे बहुत है, इसलिये निवृत्त होकर बैठे, ऐसा कुछ लोग कहते हैं। लेकिन है कहाँ ? उनके साथ है ? साथ में कहाँ लाये हैं ? देखो ! आहा..हा... ! जो कुछ हो उसके घर पडा हो। भाई ! तेरी चीज तो अन्तर आत्मा (है)। देह का नाश हो जायेगा। देखो ! उसमें लिखा है। चित्र में मुर्दा (है)। एक कौआ है। आहा..हा... ! कौआ तेरे मुख में चरकेगा। देह तेरा नाश (होगा), भगवान ! ऐसी चीज में (मोह मत कर)।

'जामनगर' में लिखा है। 'जामनगर' स्मशान है न ? दर प्रकार की चीज लिखी है। जन्म, युवान, फिर ब्याह करता है, फिर युवानी, कमाता है, फिर वृद्ध होता है, पलंग पर गिरता है, मर जाता है और फिर उठा ले जाते हैं। ऐसे 'जामनगर' के स्मशान में दस चित्र बनाये हैं। अपने यहाँ है। इस कबाट में है। स्मशान में बनाया है। अभी देखने गये थे। देखो ! एक आदमी मर गया है। य सब है न ? स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब, धूल में है, क्या है तुझे ? वह तो परचीज है। अनित्य चीज तेरे साथ क्या आयेगी ? आहा..हा... !

२- अशरण भावना

सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि, काल दले ते;

मणि मंत्र तंत्र बहु होई, मरते न बचावै कोई।।४।।

अन्वयार्थ :- (सुर असुर खगाधिप) देवों के इन्द्र, असुरों के इन्द्र और खगेन्द्र (गरुड़, हंस) (जे-ते) जो-जो हैं (ते) उन सबका (मृग हरि ज्यों) जिसप्रकार हिरन को सिंह मार डालता है, उसी प्रकार (काल) मृत्यु (दले) नाश करता है। (मणि) चिन्तामणि आदि मणिरत्न, (मंत्र) बड़े-बड़े रक्षामंत्र, (तंत्र) तंत्र, (बहु होई) बहुत से होने पर भी (मरते) मरनेवाले को (कोई) वे कोई (बचावै) नहीं बचा सकते।

भावार्थ :- इस संसार में जो-जो देवेन्द्र, असुरेन्द्र, खगेन्द्र (पक्षियों के राजा) आदि हैं, उन सब का-जिस प्रकार हिरन को सिंह मार डालता है उसी प्रकार-काल (मृत्यु) नाश करता है। चिंतामणि आदि मणि, मंत्र और जत्र-तंत्रादि कोई भी मृत्यु से नहीं बचा सकता।

यहाँ ऐसा समझना कि निज आत्मा ही शरण है; उसके अतिरिक्त अन्य कोई शरण नहीं है। कोई जीव अन्य जीव को रक्ष कर सकने में समर्थ नहीं है, इसलिये पर से रक्षा कि आज्ञा करना व्यर्थ है। सर्वज्ञ-सदैव एक निज आत्मा ही अपना शरण है। आत्मा निश्चय से मरता ही नहीं, क्योंकि वह अनादि अनन्त है-ऐसा स्वोन्मुखतापूर्वक चिंतवन करके सम्यग्दृष्टि जीव, वीतरागता की वृद्धि करता है, यह 'अशरण भावना' है।।४।।

अब, अशरण, दूसरी अशरण भावना।

सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि, काल दले ते;
मणि मंत्र तंत्र बहु होई, मरते न बचावै कोई।।४।।

है दूसरा श्लोक ? अशरण भावना। देखो ! यहाँ एक मुर्दा बनाया है, देखो ! यहाँ मुर्दा (है)। '**(सुर, असुर)...**' तेरे लाख देव और देवी हो, तुझे मृत्यु से बचानेवाला कोई है नहीं। लक्ष्मी को माने, वृक्ष को माने, धूल को माने, अम्बाजी को माने, भवानी को माने। वे सब नाशवान हैं। वे सब भूत हैं। अम्बाजी और भवानी सब भूतनी हैं। ऐ..ई..! भूतनी को माने, वे सब नाशवान हैं। वे सब वहाँ दु:खी हैं। देव में भी दु:खी है। उसको मानना। मरते समय कोई बचा सकता नहीं।

'**(सुर असुर खगाधिप)**' अर्थात् '**देवों के इन्द्रि, असुरों के इन्द्र और खगेन्द्र...**' समझे ना ? विद्याधर '**(गरुड, हंस)...**' कोई मृत्युकाल में किसी को बचानेवाला है नहीं। देखो ना ! ये 'लालबहादुर शास्त्री', कहाँ 'ताश्कंद' में बड़े डॉक्टर साथ में थे। असुख है, ऐसा बोले। असुख है। चलकर गये। डॉक्टर दूसरे कमरे में थे। ऐसे देखा, खत्म। साँस बन्द हो गई थी। पाँच-सात मिनिट में तो खत्म। क्या करे ? धूल करे कोई। समझ में आया ? देह का आयुष्य पूरा हो (तो) इन्द्र, नरेन्द्र, रखने को समर्थ नहीं। एक समय का आयुष्य किसी का बढ़े (ऐसा) तीनकाल में नहीं (बनता)। जिस समय में, जिस क्षेत्र में, जिस स्थिति में देह छूटनेवाला है, वहीं छूटेगा, वहाँ कोई शरण-फरण है नहीं। एक क्षण रख सके (ऐसी) तीनकाल में किसी की ताकत नहीं। ऐसी अशरण भावना भानी। देखो !

'उन सब का जिसप्रकार हिरन को सिंह मार डालता है...' देखो ! सिंह लिया है। हिरन के पैर पकड़ लिये हैं। सिंह है। हिरण क्या करे ? मृत्युकाल आया, कोई शरण नहीं। 'श्वास तारो सगो नहि'-ऐसा हमारे यहाँ काठियावाड़ में कहते हैं। आपमें भी कुछ कहते होंगे। कहते हैं या नहीं ? साँस तो जड़ है, वह मिट्टी चलती है, तेरे से नहीं चलती। तुम तो आत्मा हो। वह तो साँस है, रजकण है, पुद्‌ग परमाणु के स्कंध का पिंड है। वह साँस की क्रिया चलती है, आत्मा से नहीं। अरे.. अरे... ! किस को फूर्सत है ? मरने की फूर्सत नहीं। आहा..हा... ! सारा दिन मरण.. मरण.. मरण.. क्षण क्षण भयंकर मरण। मेरा.. मेरा.. मेरा.. मेरा.. करके अनन्तकाल से मर गया है। परन्तु मेरी चीज अन्दर में क्या है, उसकी कभी पहिचान की नहीं। भगवान परमात्मा तीर्थंकरदेव कहते हैं कि हे भाई ! विचार कर, क्षण भर तू विचार कर।

'जिस प्रकार हिरन को सिंह मार डालता है; उसी प्रकार मृत्यु नाश करता है। चिन्तामणि आदि मणिरत्न...' मृत्यु के समय काम करे ? चिन्तामणि घिसकर पिलाओ। धूल, क्या करे चिन्तामणि ? हिरन गर्भनी आती है न ? वह तो स्वार्थ के लिये बुलाते हैं। वहाँ थोड़ा घिसकर दे। फिर भले ही मर जाये। गर्मी से थोड़ा आवाज दे। कस्तूरी की हिरनगर्भ की गोली आती है। मात्र कस्तूरी नहीं, गोली आती है। बहुत ऊँची चीज उसमें होती है। मैंने देखी है। बहुत साल पहले 'पालेज' में देखी थी। एक आदमी बेचने आता था और एक स्थानकवासी साधु था, वह लेता था। मैंने कहा, ठीक ! 'बरवाला' के (कोई साधु थे)। वे लेते थे। उस दिन देखा था। संवत १९६७ की साल। मरते समय थोड़ा घिसकर पिलाते हैं। थोड़ी गर्मी हो तो बोले, क्या बापू ! क्या करना है ? बस ! इतना। बाद में तो मर जायेगा। कुछ पूछना हो तो पू ले। बाद में मर जाता है। क्या कोई शरण है ?

मणि, चिन्तामणि रत्न घर में पड़ा हो। कौन रख सके ? समझ में आया ? आहा..हा... ! देखो न ! दस-दस करोड़ रूपये। दस करोड़। अभी 'रतनगढ़' है न ? अभी आया था न भाई ? उनके मामा के पास दस करोड़। देखो तो माणेक भरे हो या सोना भरा हो। कहीं खर्च करने की वृत्ति नहीं। पुत्र नहीं था। दस करोड़ रूपये। सोना तो सोना ही भरा हो, माणेक तो माणेक ही भरे हो, समझे न ? इतनी चीज। ढिगले (थे). चांदी ही भरे हो। मणिरत्न हो तो मणिरत्न भरे हो। दस करोड़ कहाँ डाले ? मरत समय... भाई ! आहा..हा... ! अरे.. ! कोई नहीं है। पुत्र नहीं था।

सरकार ने कहा, दो करोड़ लाओ। उत्तराधिकारी का दो करोड़ लाओ। दुनिया हैरान.. हैरान... (हो रही है)। अपनीचीज नित्यानन्द भगवान, उसकी दृष्टि करते नहीं, संभाल करते नहीं, उसकी क्या चीज है-उसका ज्ञान करते नहीं। मैं हूँ कौन ? यह आत्मा-आत्मा करते हैं, वह है कौन ? सब है उसका विचार करता है, लेकिन मैं कौन हूँ ?

'**चिन्तामणि आदि मणिरत्न बड़े-बड़े रक्षामंत्र...**' हो। देखो ! मुर्दे के पास किया है न ? स्वाहा.. ब्राह्मण करता है। धूल में भी रख सकता नहीं। ब्राह्मण भी मर जाता है। ब्राह्मण के पास पढ़ाते हैं न ? क्या कहते हैं ? मृत्यु के जाप। सेठ लोगों को भ्रमणा के पार नहीं होते। बड़ी भ्रमणा... बड़ी भ्रमणा। समझ में आया ? हमने एक बड़ा सेठ देखा था। बड़ा करोड़पति। मिल थी। उनके घर पर ही ठहरे थे। वहाँ एक ब्राह्मण जाप जप रहा था। ये क्या ? सेठे के लिये। अरे..रे..रे... ! ऐसे बनिये होकर भी जाप जपे। मृत्यु का जाप। लक्ष्मी आती होगी ? मर जायेगा (तो भी) 'भाग्य बिना मिले न कोड़ी, हुन्नर करे हजार, भाग्य बिन मिले न कोड़ि।' लाख हुन्नर कर ना, वह तो तेरा राग है। पैसा आदि मिलना तो पूर्व के पुण्य के कारण से है। तेरी व्यवस्था के कारण मिलता है ? समझ में आया ? तेरी होशियारी से मिला होगा न ? धूल में भी नहीं है। उससे अधिक होशियार तो बहुत है। पूर्व के पुण्य के रजकण पड़े हो, (उसके) पाक के काल में लक्ष्मी दिखती है। उसमें तेरे में क्या आया ? धूल में आया क्या ? पाँच करोड़ देखा उसमें (क्या हुआ) ? ममता में निमित्त है।

भगवान आत्मा आनन्दमूर्ति है, उसकी रुचि और दृष्टि किये बिना वह सब अशरण.. अशरण.. अशरण.. (है)। समझ में आया ? पचास लाख की पुँजी हो, थोड़ा बीमार हो, डॉक्टर कहे, केन्सर हुआ है। साहब ! स्त्री को मत बोलना। अभी दो साल हुए शादी की है। ऐसा बना था ? भाई ! 'लींबडी' में। दस लाख हुए थे। हमें तो यह सब एक-एक बात मालूम है न ! दस लाख हुए थे ओर नयी शादी की थी। ४८ साल की उम्र में नयी शादी की थी। दस लाख रूपये। डॉक्टर कहे, केन्सर हुआ है। (तो उसने कहा), साहब ! किसी को बोलना मत। मुझे भले बताया, परन्तु अब बाहर किसी को मत कहना। नहीं तो स्त्री को और सब को दु:ख होगा। सब को दु:ख होगा। मर गया बेचारा। ४८ वर्ष की छोटी उम्र थी। क्या करे धूल में ? अशरण में पैसा शरण (है) ? स्त्री शरण है ? कोई शरण है ? सिंह देखो ! हिरन के पैर पकड़ लिये हैं।

कौन करे ?

'तंत्र, बहुत से होने पर भी...' जंत्र, तंत्र, मंत्र कोई करे। मादलीया करते हैं। ऐसा.. ऐसा.. करते हैं। धूल भी नहीं है, सुन ना। तुझे कोई शरण नहीं है। मूढ, पक्का मूढ है। बैल जैसा मूढ। भाई ! तेरे आत्मा का चिंतवन कर। हित कर। आत्मा क्या है ? उसकी तो पड़ी नहीं और ऐसा-ऐसा (करता है)। कोई शरण नहीं। 'मरनेवाले को वे कोई नहीं बचा सकते।' आहा..हा...! रोये। ३५ साल की स्त्री मर जाये, ४० वर्ष का पति रोये। अरे..! ये लड़के का क्या होगा ? नयी शादी करुँगा। छोटी उम्र है। पाँच लाख की पूँजी है। हाय.. हाय..। कोई शरण है ?

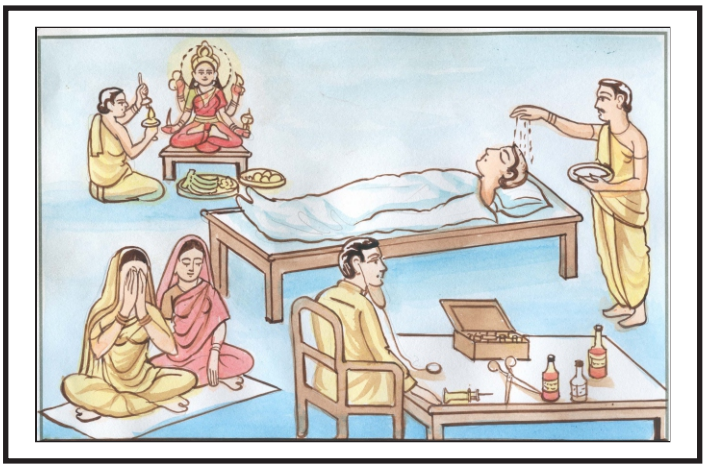

सब किया है अन्दर, देखो ! देवी जैसा किया है। एक ब्राह्मण मुर्दे पर ऐसा ऐसा करता है। क्या जंतर-मंतर करता है ? जिस आयुष्य की स्थिति, जिस समय जिस क्षण में, जिस पलंग पर, जिस प्रकार से (पूरी) होनेवाली है, उसे तीनकाल में इन्द्र, नरेन्द्र, जिनेन्द्र कोई बदल सके नहीं। किसी की ताकत नहीं कि आयुष्य का एक समय बढ़ा सके। लेकिन मूढ पर में शरण ढूँढने जाता है। आहा..हा...! ये सब ऐसे मूढ होंगे ? पैसेवाले ? पैसेवाले माने क्या ? पैसेवाले अर्थात् बड़े धूलवाले।

भावार्थ :- 'इस संसार में जो-जो देवेन्द्र, असुरेन्द्र, खगेन्द्र, (पक्षियों का राजा) आदि हैं, उन सब का, जिसप्रकार हिरन को सिंह मार डालता है, उसी प्रकार-काल (मृत्यु) नाश करता है। चिंतामणि, आदि मणि, मंत्र और जंत्र-मंत्रादि कोई भी मृत्यु से नहीं बचा सकता।'

'यहाँ ऐसा समझना कि निज आत्मा ही शरण है।' अ..हो...! मैं नित्य ध्रुव, मैं तो हंमेशा

रहनेवाला हूँ। विकार भी क्षणिक पलटता है, शरीर पलटता है, मैं तौ ध्रुव नित्यानन्द हूँ। मेरे अन्तर स्वरूप में तो, आनन्द-अतीन्द्रिय आन्द पड़ा है। वस्तु में आनन्द, शान्ति पडी है। ऐसा मैं ही आत्मा हूँ, ऐसा धर्मी जीवों को अपने स्वरूप का वारंवार मनन, चिंतन करना। '**आत्मा ही शरण है।**' दूसरा कोई शरण है नहीं।

अरिहंता शरणं आता है न ? मांगलिक में आता है या नहीं ? अरिहंता शरणं, सिद्धा शरणं, केवलिपण्णत्तो धम्मो शरणं। मांगलिक में आता है या नहीं ? भगवान शरण देते हैं ? भगवान कहते हैं कि, तू तेरे स्वरूप की संभाल कर, तू तेरा शरण है। ऐसा कहते हैं। समझ में आया ?

मुमुक्षु :-...

उत्तर :- किसका शरण ? यहाँ आकर भगवान देते हैं क्या ? अरिहंत भगवान तो अरिहंत के पास है। महाविदेह में बिराजते हैं, तीर्थंकरदेव 'सीमंधर' प्रभु बिराजते हैं। 'महावीर' भगवान तो सिद्ध हो गये। चौबीस तीर्थंकर तो सिद्ध हो गये। शरीर बिना (है)। क्या नीचे कोई शरण देने आते हैं ? वे कह गये हैं कि, तेरा स्वरूप शुद्ध आनन्दकन्द अन्दर है, उसका शरण लो। उसे ही भगवान का शरण कहते हैं। दूसरा क्या ? दूसरा भगवान कहाँ शरण देने आते हैं ?

मुमुक्षु :- शरण न आये ?

उत्तर :- शरण में क्या ? थोड़ा शुभभाव होता है। उसमें आत्मा में क्या हुआ ? देनेवाले को, लेनेवाले को कहाँ भान है ? आत्मा अन्तर ज्ञानानन्द प्रभु चैतन्यसूर्य (है)। आत्मा अर्थात् चैतन्यसूर्य। आत्मा अर्थात् आनन्द, अतीन्द्रिय आनन्द का भंडार। आहा..हा... ! ऐसे आत्मा का शरण न ले तो (अन्य) किसी में शरण देने की ताकत है नहीं। आहा..हा... ! तेरी नजर तेरे में पड़े तो शरण है। तेरी नजर शरीर और पर में, पुण्य-पाप पर रहे तो कुछ शरण है नहीं, ऐसा कहते हैं। आहा..हा... ! इसका नाम धर्म है। तेरी नजर तेरे में पड़नी (उसका नाम धर्म है)। बात सुनने का समय मिलता नहीं, विचारने का समय नहीं। बहुत कहे तो कहे, हमें मरने का समय नहीं। मरने का समय आयेगा तो सब (सब कुछ) एक तरफ पड़ा रहेगा। सुन तो सही। तेरे रूपये-पैसे कुछ काम नहीं आयेंगे।

कहते हैं, शरण आत्मा है। '**उसके अतिरिक्त अन्य कोई शरण नहीं है। कोई जीव अन्य जीव की रक्षा कर सकने में समर्थ नहीं है।**' कोई रक्षा कर सकता है ? मुत्युंजय करावे तो ? मृत्युंजय जाप। मृत्युंजय करनेवाला ब्राह्मण मर जाता है। मृत्युंजय (जाप) ब्राह्मण के पास करवाते हैं, सवा लाख करवाओ, सवा लाख। क्या है ? उसको पाँच-दस हजार मिले। मृत्यु से कोई बचा सकता है ? एक समय आयुष्य का बढ़ता है ? तीनकाल में नहीं। जिस समय उसे जहाँ मरना है, वह मर जाता है। भगवान केवलज्ञानी ने देखा है। इस समय देह छूटेगा। वह तीनकाल में बदलता नहीं। कहो, भाई ! क्या होगा ? यहाँ से मरकर कहाँ जाना है ?

'**इसलिये पर से रक्षा की आशा करना व्यर्थ है।**' देखो ! '**सर्वत्र-सदैव एक निज आत्मा ही अपना शरण है।**' आत्मा अन्दर शुद्ध चिदानन्द प्रभु है। पुण्य-पाप विकार दिखता है, वह तो विकार है। विकार से (भिन्न होकर) अन्दर में देखे तो शुद्ध चिदानन्द आत्मा है, ज्ञानानन्द सिद्ध समान है। सर्वज्ञ परमेश्वर वीतराग ने आत्मा आनन्दस्वरूप देखा है। वह आनन्दप्रभु आत्मा का शरण तुम लो, उसकी दृष्टि करो, उसके सन्मुख हो। दुनिया से क्या ? दुनिया कोई शरण देनेवाली नहीं। समझ में आया ?

'**आत्मा निश्चय से मरता ही नहीं...**' देह का नाश होवे। आत्मा मर जाता है ? मरते समय कोई कहता है कि, आत्मा मर गया ? आत्मा मर गया, ऐसा कहते हैं ? जीव गया-ऐसा कहते हैं। जीव गया, ऐसा कहते हैं। जीव गया। जीव वहाँ था तो अन्य जगह गया। बराबर है या नहीं ? आहा..हा... ! अभी नहीं बताया था या नहीं ? लड़की का जातिस्मरण (बताया था)। यहां आयी थी न ? 'जूनागढ़' की लोहाना की लड़की (है)। अपने यहाँ आयी है। अभी आयी थी न ? (उसे पूछा), तू कहाँ से आयी ? 'जूनागढ़' से आयी हूँ। पूर्व में तू कौन थी ? मैं गीता थी। अभी आयी थी न ? आठ दिन रही थी। समझ में आया ? 'राजुल'। पूर्व भव में 'गीता' थी। 'जूनागढ़' के लोहाना की पुत्री थी। अभी चार महिने पहले नक्की हुआ। यहाँ दो बार आ गई। अभी रहकर गयी है। आठ दिन में सब बताया। देखो ! इस लड़की को जातिस्मरण है। लोहाना की लड़की है। लोहाना समझते हो क्या है ? एक जाति है। लोहाना की एक ज्ञाति है।

'जूनागढ़' में लोहाना की जाति में वह लड़की जन्मी थी। ढ़ाई साल में उसका देह छूट

गया। ढ़ाई वर्ष। बुखार में (मर गई थी)। यहाँ आयी है। हमारे पंडितजी है न ? उनके भतीजे की लड़की (है)। यहाँ 'वांकानेर' में आयी है। यहाँ आयी थी, लाये थे। यहाँ से जाकर पक्का बताया कि, ये मेरी माँ, ये मेरे पिता, ये मेरे चाचा। वैष्णव थे तो मन्दिर में दर्शन करने जाती थी। सब बताया। २०-२२ बोल बताये। पेड़ा खाती थी, ऐसा बताया। सब बताया था। दूध इतना लाते थे, मेरे घर इतना रखते थे। दूसरे के पेड़े बनाते थे। सब बताया। उसकी माँ ने स्वीकार किया। वहाँ से मरकर यहाँ आयी। देह का खोखा तो वहाँ पडा रहा। उसको एकबार हमने पूछा, गीता कहाँ गई ? तो कहा, गीता ये रही। गीता वहाँ कहाँ है ? गीता तो मैं हूँ। पाँच साल की है। गीता कहाँ है ? बाद में तो किसी से सुना हुआ बोली कि, उसके खोखे को जला दिया। गीता का जो खोखा-शरीर था उसे जला दिया। गीता का आत्मा मैं यहाँ हूँ। ऐसा बोली। अभी आयी थी। समझ में आया ? कहाँ मालूम है ? आत्मा कौन है ? कौन जाने। दुनिया की पड़ी है। धूँए को पकड़ता है। क्या कहते हैं ? धूँआ। धूँए को पकड़े तो पकड़ सकता है ? धूँए की बोरी भरी है। धूँए की बोरी भर सकते हैं ? ऐसी इस जगत की चीज अनित्य है, उन्हें रख सकते हैं ? तुझे कोई शरण नहीं है, कहते हैं।

आत्मा अनादिअनन्त (है)। **'ऐसा स्वोन्मुखतापूर्वक चिंतवन करके सम्यग्दृष्टि जीव वीतरागता की वृद्धि करता है...'** धर्मी जीव अपने शुद्ध स्वरूप की दृष्टि करके अनित्य, अशरण की भावना करके अपने स्वसन्मुख में वृद्धि करते हैं। वही धर्म है, दूसरा कोई बाहर से धर्म होता नहीं।

३ - संसार भावना

चहुँगति दुःख जीव भरै है, परिवर्तन पंच करे है;

सबविधि संसार असारा, यामें सुख नहीं लगारा ।।१।।

अन्वयार्थ :- (जीव) जीव (चहुँगति) चार गति में (दुःख) दुःख (भर है) भोगता है और (परिवर्तन पंच) पाँच परावर्तन पाँच प्रकार से परिभ्रमण (करे है) करता है। संसार (सबविधि) सर्व प्रकार से (असारा) साररहित है, (यामें) इस में (सुख) सुख (लगारा) लेशमात्र भी (नाहि) नहीं है।

भावार्थ :- जीव की अशुद्ध पर्याय, वह संसार है। अज्ञान के कारण जीव चार गति में दुःख भोगात है और पाँच (द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव तथा भाव) परावर्तन करता रहता है, किन्तु कभी शांति प्राप्त नहीं करता; इसलिये वास्तव में संसारभाव सर्वप्रकार से साररहित है, उसमें किंचित्मात्र सुख नहीं है; क्योंकि जिसप्रकार सुख की कल्पना की जाती है, वैसा सुख का स्वरूप नहीं है और जिसमें सुख मानता है, वह वास्तव में सुख नहीं है-किन्तु वह परद्रव्य के आलम्बनरूप मलिनभाव होने से आकुलता उत्पन्न करनेवाला भाव है। निज आत्मा ही सुखमय है, उसके ध्रुवस्वभाव में संसार है ही नहीं-ऐसा स्वोन्मुखतापूर्वक चिंतवन करके सम्यग्दृष्टि जीव, वीतरागता में वृद्धि करता है, वह 'संसार भावना' है ।।५।।

संसार भावना

चहुँगति दुःख जीव भरे है, परिवर्तन पंच करे है;

सबविधि संसार असारा, यामैं सुख नहीं लगारा।।५।।

देखो ! इसमें लिखा है, देखो ! यहाँ मनुष्यगति ली है, मनुष्यगति। एक आदमी है, एक लड़का है, स्त्री सामने देखती हुई बैठी है, मकान है। यह मनुष्य का संसार। यह देव, फिर तिर्यंच। एक घोड़ा लिया है, घोड़ा। उसपर वजन भरा है। नीचे कुत्ते जैसा किया लगता है। एक नारकी। नीचे नरकगति है, हाँ ! यह पशु दिखते हैं, मनुष्य दिखते हैं। उपर देव हैं, स्वर्ग में देव हैं और नीचे नारकी हैं। माँस, शराब (खाते) पीते हैं, शिकार करते हैं, लंपटीपना करते हैं, (वे सब)

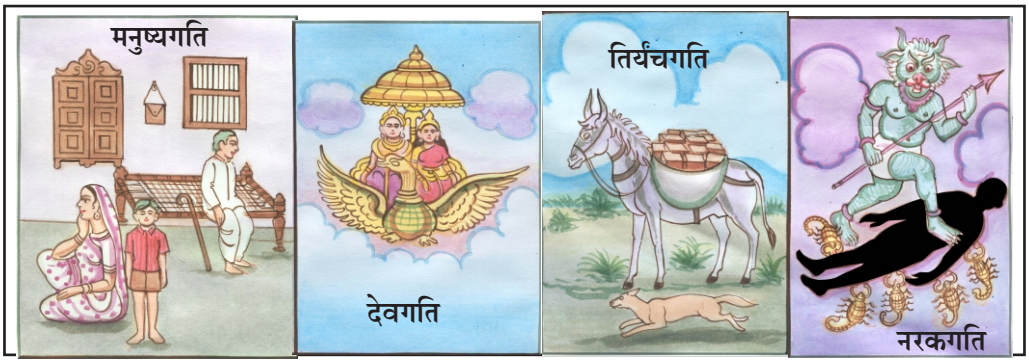

मरकर नरक में जाते हैं। नरकगति हैं। कल्पना नहीं है। कोई माने या नहीं माने, उससे वस्तु चली जाती है ? देखो ! नारकी पड़ा है। बिच्छु.. बिच्छु डंख मार रहा है और उसको जम मार रहा है। समझ में आया ? ये चार गति। मनुष्य, तिर्यंच, देव और नारकी।

'**जीव चार गति में दु:ख भोगता है...**' स्वर्ग में दु:ख ? स्वर्ग में कुछ सुख होगा या नहीं ? भाई ! लिखा है न उसमें ? क्या लिखा है ? देव में दु:ख है, देव में दु:ख है।. धूल में कहाँ (सुख), वहाँ तो आकुलता है। इन्द्राणी आदि भले (हो), परन्तु आकुलता है न ! आकुलता है कि, मेरा है, मेरा है। वह तो दु:ख है। देव में सुख कहाँ से पड़ा था ? शेठाई में ? चार गति में चारों गति ली हैं। शेठाई में सुख है ? दु:ख है। सेठ लोग दु:खी हैं, ऐसा कहते हैं। ऐ..ई.. ! भाई ! दु:खी है ? आप अन्दर में मानते हो ?

मुमुक्षु :- अन्दर आकुलता भरी है।

उत्तर :- वह आकुलता है। यह लक्ष्मी मेरी, शरीर मेरा, ऐसे रक्षण करना, ऐसा करना, धूल करना ये सब आकुलता है, दु:खी है। अन्दर कषाय की होली जल रही है। विकार की ज्वाला जल रही है, वह दु:खी है। सेठ दु:खी, रंक-राजा दु:खी, देव दु:खी। चारों गति में दु:ख (है), देखो ! ऐसे लिया है। सुख है नहीं। सुख, आत्मा के आनन्द में है। सुख सिद्धपद में है। वह सुख आत्मा में है, उसमें से प्रगट होता है। बाहर से कोई सुख आता नहीं। समझ में आया ?

'**चार गति में दु:ख भोगता है...**' '**भरे है**' ऐसा लिखा है। '**पाँच प्रकार से परिवर्तन...**' परिभ्रमण करे। द्रव्य-क्षेत्र-काल-भव और भाव। लो ! ये शुभाशुभभाव दु:खरूप हैं, ऐसा

कहते हैं। क्या (कहा) ? पाँच परिवर्तन आया न ? द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव। जितना शुभ और अशुभभाव है, वह संसार परिवर्तन दु:खरूप है। आहा..हा... ! पाँच परिवर्तन आया या नहीं ? द्रव्य में ये संयोग, क्षेत्र में यह क्षेत्र, काल में समय-समय, भव में चार गति और भाव में शुभाशुभभाव। पाँचों परिवर्तन में अनन्तकाल से आत्मा शुद्ध चैतन्य के भान बिना, सम्यग्दर्शन बिना, सम्यग्दर्शन-आत्मा के शुद्ध स्वरूप की प्रतीति, अनुभव बिना चार गति में भटका लेकिन उसे संसार का सुख कोई शरण नहीं है। यह संसार भावना की बात चलती है, समझे ?

'**संसार सर्वप्रकार से सार रहित है,...**' देखो ! '**सबविधि संसार असारा, यामें सुख नहीं लगारा।**' सुख तो आत्मा में आनन्द में है, संसार में कहीं सुख नहीं। '**इसमें सुख लेशमात्र भी नहीं है।**' लो ! थोड़ा सुख है या नहीं ?

मुमुक्षु :- ... बैठे हैं...

उत्तर :- बैठे हैं, दु:खी हैं। आकुलता है, देखो ! उसमें आकुलता है। धूल में सुख नहीं है, दु:ख है। आत्मा प्रभु अनाकुल आनन्द से भरा, उसकी सम्यग्दृष्टि, वही सुखरूप है। बाकी सब में संसार में कहीं सुख की गंध है नहीं। चक्रवर्ती दु:खी (है)। वह श्लोक आता है न ? 'नवि तुहि देवता देव लोए, नवि तुहि शेठ सेणावह्य; नवि तुहि पुढवी पय राखा...' आता है न ? पृथ्वी का पति चक्रवर्ती सुखी नहीं है। दु:खी.. दु:खी.. दु:खी.. राग और द्वेष विकार करते हैं, दु:खी है। राग-द्वेष बिना का आत्मा का स्वभाव सुखरूप है। ऐसी श्रद्धा करता नहीं और चार गति में संसार में दु:खी होकर भटकता है।

भावार्थ :- 'जीव की अशुद्ध पर्याय वह संसार है।' ? लो ! कल कोई पूछता था न ? संसार किसको कहना ? स्त्री, कुटुम्ब, पैसा, लक्ष्मी, मकान को संसार कहना ? ना। वह तो पर चीज है। संसार, आत्मा का दोष है। समझ में आया ? संसार कहाँ रहता होगा ? भैया ! समझ में आया ? संसार कहाँ रहता होगा ? मालूम नहीं। ये स्त्री, पुत्र, मकान, पैसा संसार है ? वे तो जड़ परपदार्थ हैं, उसमें संसार कहाँ से आया ? आहा..हा... ! मालूम नहीं, अभी संसार कहाँ रहता है, वह मालूम नहीं। संसार, भगवान आत्मा शुद्ध आनन्दकन्द अन्दर शुद्ध आत्मा है,

शक्ति है, सत्त्व है-उसमें से हटकर पर मेरा, मैं उसका ऐसा मिथ्यात्वभाव और राग-द्वेष का भाव, उसको भगवान, संसार कहते हैं। देखो !

'जीव की अशुद्ध पर्याय, वह संसार है।' या लक्ष्मी संसार ? दुकान संसार ? भाई ! लोग कहते हैं न उसने संसार छोड़ा। क्या संसार छोड़ा ? स्त्री-पुत्र तो पर हैं, उसे छोड़ा तो क्या छोड़ा ? अन्दर में मिथ्यात्वभाव और राग-द्वेषभाव की रुचि छोड़े तो संसार की रुचि छूटी। बाद में आसक्ति छूटे तो वीतरागता हो तो आसक्ति का त्याग हुआ, उसका नाम संसार का त्याग कहने में आता है। दुनिया से बात अलग है। समझ में आया ?

स्त्री, कुटुम्ब, शरीर संसार हो तो यह देह छूट जायेगा। उससे छूटे तो उसकी मुक्ति हो जायेगी। यह संसार हो तो (देह) छूटता है, मृत्युकाल में रहता नहीं, तो उसकी मुक्ति हो जाये, यदि यह संसार हो तो। यह संसार है ही नहीं। उसका संसार... मेरी शुद्ध स्वरूप शक्ति है, उसकी प्रतीति की खबर नहीं। यह शरीर मेरा, लक्ष्मी मेरी, कुटुम्ब मेरा, आबरु मेरी, पुण्य-पाप के भाव होते हैं वह मेरे-ऐसा मिथ्यादृष्टिपना, वही संसार है। समझ में आया ? यह ऐसाकहाँ से निकाला ? हम तो ऐसा समझते थे कि, ये स्त्री, पुत्र संसार है। स्त्री, पुत्र, मकान, पैसे, इज्जत, दुकान चलती हो, पाँच-पचास आदमी काम करते हो, यह संसार है। तुम्हारा संसार वहाँ रहता होगा ? संसार तो तेरी भूल है। तेरी भूल बाहर में रहती है ? ये तो बाहर के पदार्थ हैं।

भगवान को भूलकर मिथ्याश्रद्धान-ज्ञान करता है, उसका नाम भगवान, संसार कहते हैं। आहा..हा... ! भगवान आत्मा शुद्ध अखंडानन्द आनन्दकन्द, उसको भूलकर विकार और पर मेरा मानना और राग-द्वेष होना, उसका नाम भगवान, संसार कहते हैं। समझ में आया ? भैया ! आहा..हा... ! यह संसार कहाँ (है) ? स्त्री-पुत्र उसके घर में रहे बेचारे, वे कहाँ तुम्हारे में घूस गये हैं ? वे तो बाहर पड़े हैं। पैसे भी बाहर पड़े हैं, पाँच-पाँच, दस-दस लाख के मकान किये हो, (वे भी) बाहर पड़े हैं। साथ में आते हैं ? भाई ! बंगले में बैठा हो तो बंगला यहाँ साथ में आया है ? आहा..हा... !

भाई ! तेरी चीज अंदर शुद्ध आनन्द प्रभु है आत्मा, उसको भूलकर ये शरीर, वाणी, मन, पुण्य-पापभाव मेरा-ऐसी मान्यता मिथ्यात्व, वही तेरा संसार है। आहा..हा... ! और मिथ्यात्व

के साथ राग-द्वेष होना, वह मंद संसार है; मिथ्यात्व तीव्र संसार है। समझ में आया ? क्या कहा ? संसार, आत्मा की पर्याय में-अवस्था में रहता है। भगवान आत्मा वीतरागमूर्ति आत्मा है। स्वरूप शुद्ध चितानन्द की अनन्त गुण की मूर्ति प्रभु आत्मा है। उसकी रुचि छोड़कर पुण्य-पाप मेरा, ऐसी रुचि करना और परपदार्थ उसमें नहीं, उसे मेरा मानना, वही मिथ्यादृष्टि का मिथ्यात्वभाव संसाार है। भगवान उसको संसार कहते हैं। आहा..हा...! ऐसा कहाँ से निकला ? तुझे मालूम नहीं, इसलिये क्या दूसरो हो जाये ? और उसके साथ जो पुण्य-पाप का, राग-द्वेष का भाव है, वह संसार है, परन्तु मिथ्यात्व बड़ा संसार है और राग-द्वेष मंद संसार है। दोनों संसार है। दोनों का त्याग करके वीतरागता प्रगट करना, उसका नाम मोक्ष और संसार का अभाव है। समझ में आया ?

संसार। आया था न ? 'मोक्ष अधिकार' में है। इसमें है न ? 'मोक्ष अधिकार' में अन्त में है। मोक्ष...मोक्ष। प्रगट हो कि मिथ्यात्व ही आस्रव, बन्ध है। मिथ्यात्व का अभाव सम्यक् संवर, निर्जरा और मोक्ष है। प्रसिद्ध हो, ढिंढोरा पीटकर प्रसिद्ध हो कि मिथ्यात्व ही आस्रव, बन्ध है, वही संसार है। अपने शुद्ध चिदानन्द स्वरूप की श्रद्धा छोड़कर शरीर, वाणी मेरा, पुण्य-पाप मेरा, पुण्य-पाप का फल मेरा, बन्धन मेरा और शुभाशुभभाव मेरा-ऐसी मान्यता मिथ्यात्व वही संसार, आस्रव और बन्ध है। आस्रव, बन्ध ही संसार है। आहा..हा...! यह कहाँ से निकाला ? तुझे मालूम नहीं, इसलिये दूसरा निकाला ऐसा कहे ? जैसा है, वैसा वही है। समझ में आया ? देखो !

'मोक्ष अधिकार' में है। प्रगट हो कि मिथ्यात्व ही आस्रव और बन्ध है। कर्म-फर्म नहीं, और मिथ्यात्व का अभाव सम्यक् संवर, निर्जरा और मोक्ष है। समकित ही संवर, निर्जरा और मोक्ष है। आहा..हा...! अपना शुद्ध स्वरूप भगवान आत्मा पूर्ण... पूर्ण की प्रतीति, उसका ज्ञान और उसकी लीनता, वही सम्यग्दर्शन, संवर, निर्जरा और मोक्ष है। दो बात ही ली है। एक मिथ्यात्व, आस्रव, बन्ध। सम्यक् संवर, निर्जरा और मोक्ष। प्रगट हो, जाहिर हो, ढिंढोरा पीटकर हम कहते हैं, नगाड़े की चोट पर हम कहते हैं, कहते हैं या नहीं ? नगाड़े की चोट से कहते हैं, भगवान आत्मा शुद्ध चिदानन्दस्वरूप को भूलकर पुण्य-पाप के भाव को अपना मानना, उसका बन्धन अपना मानना और उसका फल संयोग अनुकूल-प्रतिकूल अपना मानना, बस ! वही

मिथ्यात्व और वही आस्रव और बन्ध है। आहा..हा...! समझ में आया ? समय कहाँ से मिले ? समय मिलता नहीं, आदमी ऐसा बोलते हैं। भाई ! समय पाप में गँवाया। अब (क्या) ? अब इस चिन्ता में। ये चला गया, ये चला गया लेकिन कहाँ गया ? उसके ठिकाने पड़े हैं। शरीर के ठिकाने शरीर है, पैसे के ठिकाने पैसे हैं, कीर्ति की जगह कीर्ति है। यहाँ आत्मा में कहाँ घूस गये हैं ? शरीर चलता नहीं, उसमें तुझे क्या ? वह तो कहते हैं।

शरीर जड़ है। जड़ का चलना, हिलना भगवान कहते हैं कि, जड़ की पर्याय से होता है। उसमें पर्याय-द्रव्य है। यह वस्तु परमाणु है। तो परमाणु में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत्, भगवान कहते हैं। प्रत्येक पदार्थ में नयी-नयी अवस्था प्रतिक्षण उत्पन्न होती है, पूर्व की अवस्था का अभाव होता है और ध्रुवपने कायम रहता है। उसका हिलना, चलना आत्मा से नहीं (होता)। मूढ अज्ञानी पाखंडी मानता है। जड़ की अवस्था मेरे से होती है, वही मिथ्यात्व बड़ा संसार है। समझ में आया ? जड़, जड़ है, क्या तेरी चीज है ? यह तो मिट्टी है, धूल है। धूल की अवस्था कैसी रहे, सरोग, निरोग ? -वह तो उसके आधीन है, आत्मा के आधीन है ?

मुमुक्षु :- उसका उपाय बतलाईए।

उत्तर :- ये क्या कहते हैं ? चले तो चलो, न चले तो न चलो। मुझे क्या है ? पर के साथ क्या है ? ऐसी अन्तर दृष्टि करना, वही समाधान और संतोष है। आहा..हा...! बैलगाड़ी चले। बैलगाड़ी चलती है न ? बैलगाड़ी के नीचे कुत्ता चले। कुत्ता जाने कि मेरे से गाड़ी चलती है। मूढ है। शरीर आदि तो गाड़ी है, उससे चलती है। तू है तो चलती है ? कुत्ते जैसा है।

मुमुक्षु :- .. गाड़ी चलती है..

उत्तर :- नहीं, चली नहीं। उसके कारण से चली है। तुम्हारे कारण से बिलकुल नहीं। इसका चलता है, मेरा नहीं चलता, उसकी जलन अन्दर में घूस गई है। किसका चले और किसका न चले ? मूल में समाधान करने आता नहीं। भाई ! सच बात है या नहीं ? आहा..हा...!

कहा था न ? एक साधु थे, श्वेताम्बर साधु थे। (संवत) १९८८ का चातुर्मास था न ? 'जामनगर'। वहाँ एक श्वेताम्बर साधु थे। बाद में गये थे। वहाँ एक पाठशाला है। एक साधु हो

गये थे। फिर हम वहाँ गये थे। बेचारे बहुत दु:खी थे। साठ साल की उम्र होगी। ऐसे.. ऐसे.. हुआ ही करे, चौबीस घंटे, तीन साल हो गये थे। फिर (हम) गये, (तो कहने लगे), अरे...! महाराज ! दु:खी (हैं)। (हमने कहा), क्या करोगे ? समाधान करो। देह की अवस्था है। आठ साल वैसे रहा। अन्त में लट हो गई। शरीर मुलायम था, सुन्दर था। देह की पर्याय का धर्म है। देह छूट गया। आठ साल तक ऐसे रहा। नीचे सोये घसाया ही करे। देह की स्थिति (है), बापू ! ये तुम्हे मालूम नहीं, भाई ! आत्मा का अधिकार नहीं है। माने नहीं क्या करे ? आहा..हा...! अरे..! तू जाननेवाला-देखनेवाला, उसका अभिमान करे कि, पहले मैंने चलाया था, अब चलता नहीं। दोनों भूल हैं। देह देह के कारण से रहे, देह के कारण से चले और देह, देह के कारण से रुक जाये। आहा..हा...! लेकिन वह माने नहीं। भ्रमणा.. भ्रमणा.. भ्रमणा.. भ्रमणा। यहाँ वही कहते हैं, समझ में आया ?

'जीव की अशुद्ध पर्याय, वह संसार है।' देह मेरे से चला था, अब देह मेरे चलता नहीं- ऐसी तेरी मान्यता, तेरी श्रद्धा, तेरा मिथ्यात्व संसार है। आहा..हा...! शरीर तंदुरस्त हो, लट्ठ जैसा हो। धूल है, बापू ! लट गिरेगी, भाई ! यह शरीर मिट्टी है। यह रत्न नहीं है। रत्न हो तो भी धूल है। बापू ! तेरी अमर चीज तो अन्दर है। अमर चीज, अमर चीज चिदानन्दर मरे नहीं ऐसा भगवान आत्मा। ऐसी अमर चीज को पहिचान, बाकी सब मिथ्याभ्रम है। समझ में आया ?

'अज्ञान के कारण जीव चार गति में दु:ख भोगता है...' लो ! अपने स्वरूप के भान बिना परवस्तु मेरे से चली, ग्रही, टिकी, मैंने रक्षा की। अभी तक तो मैंने बहुत रक्षा की, अब नहीं चलती। मूढ है। रक्षा की थी ? वह तो उसके कारण से रही थी। अब हमारे हाथ की बात न रही, पहले हमारे हाथ की बात थी। तेरे हाथ में आत्मा है। आत्मा क्या पर का कर सकता है ? जीव को अजीव माने तो मिथ्यात्व। अजीव को जीव माने तो मिथ्यात्व। ऐसा आता है या नहीं ? अजीव को जीव मानना मिथ्यात्व है। जीव को अजीव मानना मिथ्यात्व है। अपने शुद्ध चिदानन्दस्वरूप को नहीं मानकर, मैंने शरीर को अब तक तो ठीक रखा था, हाँ ! कुटुम्ब को, दुकान को, (बराबर रखा था), मूढ है। वह तो परवस्तु है। तेरे से कहाँ रही थी ? चली जाती है तो उसके कारण से जाती है, तेरे कारण से जाती है ? समझ में आया ?

पागल का दृष्टान्त है न शास्त्र में ? एक पागल था, पागल। बाहर बैठा था। (उतने में) राजा

आया। रानी आयी। सब आये। पागल बैठा था। आये, शाम को चले गये। क्यों पूछे बिन जाते हैं ? परन्तु तेरे कारण से कहाँ आये हैं ? तुम पागल यहाँ बैठे हो। हम तो हमारे कारण से आये हैं। पागल बैठा था, पागल समझे ? दस बजे का टाईम था। राजा आया। हाथी पर जाते थे। दस बज गये थे। नदी में जल था तो आहार करने को रुक गये। रानी, हाथी, घोड़ा (सब थे)। पागल को लगता है, ये मेरा राजा, ये मेरी रानी। चार बजे चले। तो कहता है, क्यों चले जाते हो ? हम तेरे कारण से कहाँ आये हैं ?

इसीप्रकार यह पागल (है)। पूर्व के कारण से लक्ष्मी आयी, स्त्री आयी, मकान आया वह तो उसके कारण से आये हैं। नाश होता है तो कहता है कि, चले क्यों जाते हैं ? लेकिन तेरे कारण से कहाँ से आये हैं कि, न चले जाये ? पागल है, पागल। पागल के गाँव कोई अलग होते हैं ?

यहाँ तो कहते हैं कि, चार गति में भटकता है 'किन्तु कभी शान्ति प्राप्त नहीं करता...' विशेष कहेंगे... (श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव !)

आत्माको सदा ही ऊर्ध्व अर्थात् मुख्य रखना चाहिए। चाहे जैसा प्रसंग आए तो भी द्रव्य-स्वभावको मुख्य रखना। शुभाशुभ-परिणाम भले ही आए पर नित्य द्रव्यस्वभावका ध्येय रखना। आत्माको मुख्य रखने पर जो दशा होती है वह निर्मल-दशा साधन कहलाती है ओर उसका साध्य केवलज्ञान करना है ओर उसका ध्येय पूर्ण आत्मा है। कषायकी मन्दता अथवा क्षयोपशम ज्ञानके विकासकी मुख्यता होगी तो दृष्टि संयोग पर जाएगी। आत्माकी ऊर्ध्वताकी रूचि और जिज्ञासा हो तो उसका प्रयास हुए बिना रहे ही नहीं। जिसको आत्मानुभवके पहले भी यथार्थ जिज्ञासा हो, उसीको अव्यक्तरूपसे आत्माकी ऊर्ध्वता है। यहाँ अभी आत्मा जाननेमें तो आया नहीं, पर उसकी ऊर्ध्वता अव्यक्त रूपसे रहती है, और वह अनुभवमें आए तब व्यक्त प्रकट ऊर्ध्वता होती है। (परमागमसार-३९९)